RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17, अंक-1, दिसम्बर 2023 जनवरी फरवरी 2024

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रास्रो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-17 अंक - 1 दिसम्बर 2023-जनवरी-फरवरी-2024

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टीट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंधा अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर दूरभाष : 0145-2442701

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय सनातन परम्परा में गृहस्थ आश्रम का तात्विक विश्लेषण

आराधना माहेश्वरी

सहायक आचार्य (समाज विज्ञान विभाग)

हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

गृहस्थ आश्रम

भारतीय सनातन परम्परा में गृहस्थ आश्रम को केवल वैवाहिक या पारिवारिक जीवन का नाम नहीं दिया गया, अपितु इसे जीवन के संगठन की मूलधारा माना गया। स्मृतिकारों की दृष्टि में गृहस्थ आश्रम उस वायु के समान है जिसके द्वारा जीवन का संतुलन चलता है। मनु ने स्पष्ट कहा कि जैसे संसार में वायु के बिना जीवित प्राणियों का अस्तित्व संभव नहीं, उसी प्रकार आश्रम व्यवस्था में यदि गृहस्थ आश्रम न हो तो अन्य आश्रम टिक ही नहीं सकते। इसीलिए यह आश्रम केवल व्यक्तिगत सुख-शांति का क्षेत्र न रहकर सामाजिक पोषण का दायित्व वहन करता है।

गृहस्थ आश्रम का आरम्भ विवाह-संस्कार से होता है। विवाह केवल भोगप्रधान संबंध नहीं बल्कि दो आत्माओं का एक आध्यात्मिक संयोग है, जो धर्म, कर्तव्य और उत्तरदायित्व से संचालित होता है। पति और पत्नी दोनों एक-एक चक्र माने गए हैं; यदि किसी एक में दुर्बलता या असंतुलन आ जाए तो जीवन-रथ टूटने लगता है। इसलिए वेद उन्हें परस्पर सहयोग, विश्वास, निष्ठा और अनुशासन की भावना से संयुक्त रहने का आदेश देते हैं। यजुर्वेद में इस आश्रम को सौ वर्ष तक सुखपूर्वक और संगतिपूर्ण ढंग से जीने की प्रेरणा दी गई है, जिसमें दम्पत्तियों को संयमित रहकर, सीमित इच्छाओं के साथ, एक-दूसरे के हित में कार्य करते हुए अपना जीवन नियोजित करना चाहिए।

वेदों की दृष्टि में गृहस्थ आश्रम केवल भोजन, धन या भौतिक संसाधनों का उत्पादन करने वाला स्थान नहीं है, बल्कि यह सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का पोषक भी है। ब्रह्मचारी आश्रम को शिक्षा, वानप्रस्थ को आश्रय, संन्यासियों को भिक्षा और अतिथियों को आदर देने का कार्य गृहस्थ ही करता है। यदि गृहस्थ आश्रम दुर्बल हो जाए तो अन्य आश्रमों की प्रगति रुक जाती है। अत: गृहस्थ आश्रम की सम्पन्नता केवल धन के रूप में नहीं, बल्कि धर्म, नैतिकता, दायित्वबोध और संयम की सम्पन्नता के रूप में समझी जाती है।

गृहस्थ आश्रम का मूल तत्त्व परस्पर सहयोग, आत्मसमर्पण और सामंजस्य में निहित है। वेद में कहा गया है कि दम्पती को धैर्यवान होना चाहिए और स्वावलंबन की भावना उनके जीवन का आधार होनी चाहिए। जब पति-पत्नी में आत्मीयता, सहयोग, समझ और धैर्य होता है तब ही गृहस्थ जीवन सौभाग्यपूर्ण

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

बनता है। यदि दोनों में अहंकार, असंयम या स्वार्थ बढ़ जाए तो परिवार की नींव कमजोर पड़ सकती है। इसीलिए गृहस्थ आश्रम को संयम और अनुशासन का व्यावहारिक विद्यालय कहा गया है जहाँ त्याग, सेवा और उत्तरदायित्व जीवन के अनिवार्य अंग बनते हैं।

गृहस्थ आश्रम समाज के आध्यात्मिक जीवन की आधारशिला भी है। भारतीय ऋषियों ने संन्यास या वानप्रस्थ को उच्च तो माना, परंतु उनके अस्तित्व का आधार गृहस्थ को ही माना। गृहस्थ यदि धर्मपरायण, चरित्रवान और समर्पणशील है तो उसका परिवार, समाज और आगे आने वाली पीढ़ियाँ सब स्थिर और उन्नत होती हैं। इस प्रकार गृहस्थ आश्रम का तत्त्व केवल सांसारिक सुख-सुविधाओं में नहीं, बल्कि धर्म, कर्तव्य, आचार, संयम और सामूहिक कल्याण में निहित है।

पति के कर्तव्य :

भारतीय वैदिक परम्परा में पति के कर्तव्यों का वर्णन अत्यन्त स्पष्ट, सुसंगठित और दार्शनिक आधार पर किया गया है। ऋग्वेद और अथर्ववेद में वर्णित विवाह-सूक्तों में यह बात प्रतिपादित है कि विवाह केवल सामाजिक बन्धन या दैहिक संबंध नहीं, बल्कि जीवन के संपूर्ण सामंजस्य और उन्नति के लिए स्थापित संस्कार है। पति पत्नी का पाणिग्रहण केवल शुभता और सौभाग्य के लिए ही नहीं करता, बल्कि इस भाव के साथ करता है कि वह उसके भरण-पोषण, सुरक्षा, सम्मान और उत्थान के दायित्व का निर्वाह करेगा। वेदों के अनुसार पति का पहला और प्रमुख कर्तव्य पत्नी की आजीविका और सुख-सुविधाओं की व्यवस्था करना है। यह दायित्व केवल अन्न और धन तक सीमित नहीं, बल्कि मानसिक, शैक्षिक, नैतिक और सामाजिक उन्नति तक विस्तृत है।

पति से अपेक्षा की गई है कि वह पत्नी के जीवन-स्तर को उन्नत करे। इसमें उसके स्वास्थ्य, शिक्षा, संस्कार, ज्ञान तथा व्यक्तित्व-विकास का विचार सम्मिलित है। पति पत्नी की शिक्षा का स्तर ऊँचा करे, उसे समझदारी, प्रबुद्धता और विवेक की दिशा में आगे बढ़ाए तथा उसकी क्षमताओं के विकास के लिए उपयुक्त वातावरण तैयार करे। यह कर्तव्य केवल बाह्य व्यवस्था तक सीमित न होकर एक सतत प्रेरणात्मक भूमिका का निर्वाह भी है। आधुनिकता, परिवर्तन और समयानुकूल परिस्थितियों में पत्नी को समर्थ बनाने का अभिप्राय है कि पति स्वयं भी नवीन परिवर्तनों को स्वीकार करे और परिवार जीवन को प्रगतिशील बनाते हुए उसके अनुसार अपनी जीवन-पद्धति में आवश्यक परिवर्तन लाए।

वेदों ने पति को यह भी निर्देश दिया है कि वह पत्नी से किसी भी विषय में कुछ छिपाए नहीं। चाहे वह भोजन, धन या जीवन के किसी भी प्रसंग से सम्बन्धित हो, पारदर्शिता का भाव पति-पत्नी के संबंधों में अनिवार्य है। ऐसा इसलिए है कि गृहस्थ जीवन पारस्परिक विश्वास, समझ और स्पष्टता का आधार लेकर चलता है। यदि पति अपने कार्यों की जानकारी पत्नी से साझा करता है और पत्नी भी उससे पूर्ण निष्कपटता रखती है, तो जीवन में सामंजस्य, शांति और सुख अपने आप विकसित होता है।

पति का यह भी कर्तव्य है कि वह पत्नी को ऐसी सुविधाएँ प्रदान करे जिससे उसके मन में प्रसन्नता, आत्मीयता और संतोष बना रहे। प्रसन्नता से उत्पन्न आत्मसमर्पण ही वैवाहिक जीवन का वास्तविक रस है। वैदिक दृष्टिकोण में पति-पत्नी के संबंध किसी बाहरी दबाव पर नहीं, बल्कि आत्मीयता, सहयोग, सम्मान और प्रेम के आधार पर टिके रहते हैं। अत: पति का लक्ष्य पत्नी को सुख, आत्मविश्वास और सुरक्षा प्रदान

कर उसे अपने जीवन में सहभागी बनाए रखना है, जिससे वह स्वयं भी परिवार और आश्रम धर्म के प्रति समर्पित रह सके।

इस प्रकार वेदों ने पति को केवल परिवार का मुखिया नहीं माना, बल्कि उसे एक उत्तरदायी संरक्षक, प्रेरक, मार्गदर्शक और सहयोगी के रूप में परिभाषित किया है। यह दायित्व जितना बाहरी व्यवस्था का है, उतना ही आत्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक विकास का भी है।

पत्नी के कर्तव्य :

वेदों में पत्नी के कर्तव्यों का वर्णन अत्यन्त व्यापक, आदर्शपूर्ण और उच्च जीवन-मूल्यों पर आधारित है। पत्नी के स्वरूप का वर्णन केवल गृहस्थी की संचालिका के रूप में नहीं, बल्कि परिवार की सौभाग्य-लक्ष्मी, संस्कार-भूमि और व्यक्तित्व निर्माण की धुरी के रूप में किया गया है। ऋग्वेद में पत्नी को 'गृहपत्नी' या 'गृहलक्ष्मी' कहा गया है, जिसका अर्थ है कि गृह व्यवस्था का दायित्व उसी पर आधारित है। केवल भौतिक रूप से नहीं, भावना, संवेदना, नैतिकता और संतुलन के स्तर पर भी घर वही है जिसे पत्नी अपनी उपस्थिति से घर बनाती है। इसलिए वेदों ने गृह को गृहिणी का पर्याय माना और संस्कृत का प्रसिद्ध वचन सत्य प्रमाण बनकर कहा, 'घर घर नहीं होता, गृहिणी ही घर है।'

पत्नी का मुख्य कर्तव्य पूरे परिवार को सुख और सौहार्द देना है। वह केवल पति की ही नहीं, बल्कि सास, ससुर, वयोवृद्ध, अतिथिगण और परिजनों की सेवा का उत्तरदायित्व उठाती है। उसकी सौम्यता, विनम्रता और व्यवहार की मधुरता ही परिवार के माहौल को सुखद बनाती है। वेदों में उसके लिए संयम, लज्जा और मृदुस्वभाव का निर्देश है। उसकी दृष्टि में मधुरता हो, कटुता न हो; उसके व्यवहार में पारदर्शिता और शुद्ध भाव हो; परिवार के हित में चिंतन और आचरण हो। वह वीरसंतान को जन्म देकर वंश की सुरक्षा करती है और देवभाव से समृद्ध जीवन जीती है। पति की हितैषिणी, सत्यनिष्ठ और संयमी होना ही उसकी विशिष्टता है।

वेदों में स्त्री को उच्च शिक्षा देने का स्पष्ट आदेश है। वह केवल अपने लिए ही नहीं, समाज और परिवार के नैतिक उत्थान के लिए शिक्षित होती है। वेदों ने उसे विदुषी, वाग्मी और ज्ञानियों में श्रेष्ठ बताया है। वह ज्ञान के बल से यज्ञ में ब्रह्मा तक का कार्य कर सकती है। अथर्ववेद में स्त्री को इन्द्राणी की उपमा देकर उसकी विद्वत्ता और वक्तृत्व क्षमता का उच्चतम रूप प्रस्तुत किया गया है। ज्ञान और विद्या से सम्पन्न होकर वह परिवार को संस्कारित करती है और अगली पीढ़ी के चारित्रिक विकास का आधार बनती है।

वेदों में अनुशासन के रूप में भी उसके कर्तव्यों का निर्देश मिलता है। उसे समय से उठकर, स्वच्छता और पवित्रता के साथ गृह कार्य संपन्न करने का विधान है। यह केवल गृह-व्यवस्था का दायित्व नहीं, बल्कि आत्म-नियमन, सादगी और सेवा का रूप है। वह यज्ञ और धर्मकार्य में सहभागी बनती है और गृहस्थ आश्रम को आध्यात्मिकता से जोड़ती है। अलंकृत रहना भी उसके सौंदर्य और कोमलता का प्राकृतिक अंग है। सूर्या के रूप में उसे अपने पति सोम के पास अलंकृत होकर जाते हुए दर्शाया गया है, जो दाम्पत्य जीवन के सौंदर्य और पूर्णता का प्रतीक है।

स्त्री का पतिव्रता गुण वेदों में अत्यंत महत्त्वपूर्ण कहा गया है। उसमें इतनी शक्ति है कि उसके पुण्य

से पति दीर्घायु होता है और घर में विपत्ति का प्रवेश नहीं होता। पतिव्रता होने का अर्थ केवल भावनात्मक समर्पण नहीं, बल्कि चरित्र की उच्चता, धैर्य, समर्पण और कठोर मानसिक शक्ति है। वेदों ने स्त्री को अबला नहीं, बल्कि सबला कहा है। वह वीर और वीरपुत्रों की माता है, अत: किसी विपत्ति या कुदृष्टि से भयभीत नहीं होती, बल्कि उसका मान-मर्दन करने में भी समर्थ है।

अंत में वेदों ने एक सुंदर भाव व्यक्त किया है कि स्त्रियों पर देवों की कृपा रहती है। सोम उसे विनम्रता और सुशीलता प्रदान करता है, गन्धर्व उसे मधुर वाणी देते हैं और अग्नि उसे तेज, ऐश्वर्य और संतति का वरदान देता है। इस प्रकार पत्नी का स्वरूप केवल पारिवारिक या सामाजिक नहीं, बल्कि आध्यात्मिक, नैतिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक स्तर पर पूजनीय माना गया है।

दम्पती के कर्तव्य :

दम्पती के कर्तव्यों का विवरण वैदिक दृष्टि में अत्यन्त मौलिक और मानव जीवन के पूर्ण विकास का आधार माना गया है। यह केवल पारिवारिक मर्यादाओं तक सीमित न होकर आध्यात्मिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन को भी दिशा प्रदान करता है। पति और पत्नी यदि इन आदर्शों को अपनाएँ तो गृहस्थ जीवन सुख, शांति और उज्ज्वलता का केन्द्र बन जाता है।

प्रथम और प्रमुख बात यह कही गई है कि दम्पती में आस्तिकता हो, अर्थात् परमात्मा में निष्ठा और धर्म में विश्वास हो। जहाँ आस्तिकता विद्यमान होती है, वहाँ कर्तव्यनिष्ठा, सत्कर्मों में रुचि, मनोबल और आत्मविश्वास स्वाभाविक रूप से बढ़ते हैं। वेद ने यह निर्देश दिया है कि प्रत्येक कार्य उस भाव से करें कि परमात्मा सर्वव्यापक है, हमारे प्रत्येक कर्म का साक्षी है। इस विचार से मन प्रसन्न रहता है और गलत कार्यों से बचाव होता है।

दूसरा कर्तव्य है कि दम्पती जीवन को कर्मप्रधान बनावें। कर्तव्य के पालन में अनासक्त भाव रखें, अर्थात कर्म बाँधने वाला नहीं, बल्कि मुक्त करने वाला बने। जब कर्म को सेवा और धर्म की भावना से किया जाता है तो जीवन पवित्र होता है और परिवार का वातावरण सुखमय बनता है।

तीसरा कर्तव्य है उद्यमशीलता। आलस्य जीवन का पतनकारी कारण है, अत: पति-पत्नी दोनों नई योजनाओं को अपनाएँ, कर्म में निष्ठा रखें और श्रम से न डरें। वेदों की दृष्टि में संसार का सुख वही प्राप्त कर सकता है जो कर्मठता को अपने जीवन का आधार बनाता है।

चौथा कर्तव्य सत्य पर आधारित है। सत्य भाषण, सत्य व्यवहार और सत्य के प्रति प्रेम मनुष्य को हर संकट से बचाता है। सत्य जीवन का सबसे बड़ा रक्षक है, इसलिए दम्पती का व्यवहार सत्यनिष्ठ और स्पष्ट होना चाहिए।

दम्पतियों के पारस्परिक संबंध में सौहार्द और सहानुभूति का होना अत्यंत आवश्यक माना गया है। जहाँ संगति, समझ, सद्भाव और संवेदना है, वहाँ मनोमालिन्य, ईर्ष्या और विवाद कभी नहीं टिकते।

जीवन में मधुरता मधुर भाषण से आती है। इसलिए वैदिक निर्देश यह है कि पति और पत्नी दोनों विनम्र भाषी हों, कठोर वचन त्याग दें। इससे परिवार का वातावरण सौम्य बनता है।

दम्पती के लिए प्रसन्नचित्त रहना भी एक कर्तव्य माना गया है। यह मानसिक स्वास्थ्य का मूल है।

हँसना, मुस्कराना और उज्ज्वल मन से जीवन जीना परिवार में सकारात्मक ऊर्जा फैलाता है और बच्चों के व्यक्तित्व पर भी शुभ प्रभाव डालता है।

संयम भी दम्पतियों के लिए अनिवार्य है। असंयम जीवन में रोग-शोक, मानसिक तनाव और क्लेश का कारण बनता है। संयम केवल भोग में नियंत्रण नहीं, बल्कि भोजन, भाषा, व्यवहार और इच्छाओं पर अनुशासन का प्रतीक है।

दान के विषय में भी दम्पती को उदार बनने का संदेश दिया गया है। वेद कहते हैं— 'सौ हाथ से कमाओ और हजार हाथ से दान करो।' इस कथन में जीवन का महान सामाजिक सत्य निहित है कि कमाई महानता नहीं, बल्कि उसको समाज के हित में प्रयोग करना महानता है।

जीवन में सावधानी भी आवश्यक है। दम्पति का कर्तव्य है कि वे अपने शत्रुओं के प्रति सतर्क रहें। यहाँ शत्रु केवल व्यक्ति नहीं, बुराइयाँ भी हैं—अज्ञान, आलस्य, ईर्ष्या, क्रोध और मिथ्याचार। इन्हें अपने जीवन में स्थान न लेने देना ही वास्तविक विजय है।

धार्मिक जीवन को जीवंत रखने के लिए सपरिवार यज्ञ करना भी दम्पतियों का कर्तव्य बताया गया है। वेदों में स्त्री को यज्ञ का पूर्ण अधिकार दिया गया है। जब परिवार यज्ञ करता है तो पवित्रता, नैतिकता और मानसिक शक्ति मिलती है।

अंत में यह भी कहा गया है कि दम्पति केवल अपने परिवार तक ही सीमित न रहें। समाज और राष्ट्र की उन्नति में योगदान देना भी उनका दायित्व है, क्योंकि राष्ट्र की प्रगति के साथ ही व्यक्ति और परिवार की उन्नति सुनिश्चित होती है। वेदों में स्पष्ट कहा गया है— 'राष्ट्र के साथ बढ़ो।' यह वाक्य गृहस्थ जीवन को व्यापक और लोकहितकारी दर्शन से जोड़ता है।

इस प्रकार दम्पतियों का संयुक्त जीवन केवल पारिवारिक सुख के लिए नहीं, बल्कि धर्म, समाज, राष्ट्र और आध्यात्मिक विकास की एक क्रमिक यात्रा है, जिसका मूल आधार प्रेम, विश्वास, सत्य, संयम, सेवा और उदारता है।

निष्कर्षतः गृहस्थ जीवन को सुखमय और सफल बनाने के लिए पति-पत्नी दोनों का संयुक्त प्रयास आवश्यक है। सबसे पहले आस्तिकता और परमात्मा पर विश्वास से मनोबल, सद्गुण और नैतिकता विकसित होती है। इसके साथ ही कर्मठता, उद्यमिता तथा निष्ठापूर्वक कर्म करने से जीवन में प्रगति और संतोष मिलता है। सत्यवादिता और सत्यनिष्ठा दाम्पत्य संबंधों को मजबूत बनाती हैं। परस्पर सौहार्द, सहानुभूति, मधुरभाषण और प्रसन्नचित्त रहना परिवार के वातावरण को मधुर व स्वस्थ रखता है। संयम जीवन को रोग-शोक से बचाता है और दानशीलता सामाजिक संतुलन का आधार है। शत्रुओं से सावधानी सुरक्षा की भावना देती है। वेदसम्मत सपरिवार यज्ञ दाम्पत्य को आध्यात्मिक और मानसिक बल देता है। और अंत में, दम्पती केवल अपने परिवार के लिए ही नहीं, अपितु राष्ट्र और समाज की उन्नति के लिए भी समर्पित रहें—क्योंकि समाज, राष्ट्र और व्यक्ति की उन्नति परस्पर जुड़ी हुई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *ऋग्वेद – वैदिक पुस्तकालय, अजमेर, 2016*
2. *यजुर्वेद भाष्य, महर्षि दयानन्द, आर्य प्रकाशन, नई दिल्ली 2010*
3. *ऋग्वेद, साहित्य परिषद्, दिल्ली, 2014*
4. *शतपथ ब्राह्मण, खण्ड 3, ब्राह्मण 7/3/2, चौखम्बा संस्कृत सीरीज, वाराणसी, 2002*
5. *मनुस्मृति, चौखम्बा संस्कृत सीरिज, वाराणसी कृत, 2013*
7. *अथर्ववेद, संस्कृत ग्रन्थ अकादमी, दिल्ली, 2001*
8. *यजुर्वेद, आर्य प्रकाशन, नई दिल्ली 2010*
9. *धर्मसूत्र (आपस्तम्ब), चौखम्बा संस्कृत सीरीज वाराणसी, 1998*
10. *ऋग्वेद , वैदिक प्रकाशन, दिल्ली, 2015*
11. *यजुर्वेद, दयानन्दभाष्य सहित, आर्य प्रकाशन, नई दिल्ली 2010*